

१ ताड़पत्रीय प्रतिके लेखनकालका निर्णय

सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति

धवल सिध्दान्तकी प्राप्त हस्तालिखित प्रतियोंमें सत्प्ररूपणा विवरणके अन्तमें निम्न कानडी पाठ पाया जाता है १- -(प्राप्त प्रतियोंमें इस प्रशस्तिमें जाते हैं। यहाँपर सहारनपुरकी प्रतिके अनुसार पाठ रखा गया है जिसका मिलान हमें वीरसेवा मंदिरके अधिष्ठाता पं. जुगलकिशोरजी मुख्तारके द्वारा प्राप्त हो सका। केवल हमारी अ. प्रतियोंमें जो अधिक पाठ पाये जाते हैं वे टिप्पणमें दिये गये हैं।)

संततशांतभावनदः पावनभोगनियोग वांकांतेय चित्तवृत्तियलविं नललंदनं गरुपं तडिदं गजं१ षपरिपोगेज सोन्नत-पद्मणंदिसिध्दांतमुनीद्रचन्द्रनुदयं बुधकैरवषंडमंडनं मंतणमेणोसुद्गुणगणक भेदवृद्धि अनन्तनोन्तर (अनन्तज्वनोन्त।) वाक्कांतेय चित्तवल्लीय पदर्षिण३ (पदपिणनदर्प।) दर्पबुधालि४ (प्रहत्) हत्सरोजांतररागरंजितदिनं कुलभूषण५ (दिव्यसेव्य।) दिव्यसैध्दान्तमुनीद्रनुज्वलयशोजंगमतीर्थमल्लरु६ (तीर्थदमल्लयस्थं।) संततकालकायमतिसच्चरितं दिनदिं दिनक्के वीर्यं तउदिईदुश्य वियमईमैमेयो लांतवविट्टमोहदाहं तवे क्तु मुन्तुगिदे सच्चरित कुलचन्द्रदेवसैध्दान्तमुनीन्द्ररुर्जितयशोज्वल-जंगमतीर्थमल्लरु७ (मल्लरु इरु।) -

मैने यह कानडी पाठ अपने सहयोगी मित्र डाक्टर ए. एन्. उपाध्याय प्रोफेसर राजाराम कालेज कोल्हापुर, जिनकी मातृभाषा भी कानडी है, के पास संशोधनार्थ भेजा था। उन्होंने यह कार्य अपने कालेजके कानडी भाषाके प्रोफेसर श्री. के. जी. कुंदनगार महोदयके द्वारा करा कर मेरे पास भेजनेकी कृपा की। इसप्रकार जो संशोधित कानडी पाठ और उसका अनुवाद मुझे प्राप्त हुआ, वह निम्न प्रकार है। पाठक देखेंगे कि उक्त पाठ परसे निम्न कानडी पद्य सुसंशोधित कर निकालनेमें संशोधकोंने कितना अधिक परिश्रम किया है।

१

संततशांतभावनेय पावनभोगनियोग (वाणि) वा-
क्कांतेय चित्तवृत्तियोलविं नल (विं गड मोहनां) गरु-
पं तळेदं गडं प्रचुरपंकजशोभितपद्मणंदिसिध्दान्त
मुनीन्द्रचन्द्रनुदयं बुधकैरवषंडमंडनम् ॥१॥

२

मंत्रणमोक्षसद्गुणगणाब्धिय वृद्धिगे चंद्रनंते वा
क्कांतेय चित्तवल्लीपदपंकजदृप्त बुधालिहत्सरो-
जांतररागरंजितमनं कुलभूषणदिव्यसेव्यसैध्दांत-
मुनीन्द्ररुर्जितयशोज्वलजंगमतीर्थकल्पतरु ॥२॥

३

संततकालकायमत्तिसच्चरितं दिनदिं दिनक्के वी-
र्यं तळेदंदु भिक्क नियमंगळनांतुविवेकबोधदो-
हं तवे कंतु मन्युगिदे सच्चरितं कुलचन्द्रदेवसै-
द्धांतमुनीन्द्ररुर्जितयशोज्वलजंगमतीर्थरुभदवम् ॥३॥
इसका हिन्दीमें सारानुवाद हम इसप्रकार करते हैं ---

१

श्रीपद्मनन्दि सिद्धान्तमुनीन्द्ररूपी चन्द्रमाका उदय विद्वद्गणरूपी कुमुदिनी समूहका मंडन था। प्रफुल्ल कमलके समान सुशोभित थे, तथा उनके मनमें निरंतर शान्त भावना और पावन सुख-भोगमें निमग्न सरस्वती देवीका निवास होनेसे वे सहज ही सुंदर शरीरके अधिकारी हो गये थे।

२

वे दिव्य और सेव्य कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र अपने ऊर्जित यशसे उज्वल होनेके कारण जंगम तीर्थके समान थे। मंत्रण, मोक्ष और सद्गुणोंके समुद्रको बढानेमें वे चन्द्रके समान थे, तथा सरस्वती देवीके चित्तरूपी वल्लीके पदपंकज (के निवास) से गर्वयुक्त विद्वत्समुदायके हृदयकमलके अंतर रागसे उनका मन रंजायमान था।

३

ऊर्जित यशसे उज्वल कुलचन्द्र सैध्दान्तमुनीन्द्र का उभदव जंगमतीर्थके समान था। निरन्तर कालमें काय और मनसे सच्चारित्रवान्, दिनोंदिन शक्तिमान और नियमवान् होते हुए उन्होंने विवेकबुद्धि द्वारा ज्ञान-दोहन करके कामदेवको दूर रखा। यह सच्चारित्र ही कामदेवके क्रोधसे बचनेका एक मात्र मार्ग है।

इस प्रकार इन तीन कनाडी पद्योंकी प्रशस्तिमें क्रमशः पद्मनन्दि सिध्दान्तमुनीन्द्र, कुलभूषण सिध्दान्तमुनीन्द्र और कुलचन्द्र सिध्दान्तमुनीन्द्रकी विद्वत्ता, बुद्धि और चारित्रकी प्रशंसा की गई है। पर उनसे उनके परस्पर सम्बन्ध, समय और धवलग्रन्थ का उसकी प्रतिसे किसी प्रकारके सम्बन्धका कोई ज्ञान नहीं होता। अतएव इन बातोंकी जानकारीके लिए अन्यत्र खोज करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

श्रवणबेल्गुलके अनेक शिलालेखोंमें पद्मनन्दि मुनिके उल्लेख आये हैं। पर सब जगह एक ही पद्मनन्दिसे तात्पर्य नहीं है। उन लेखोंसे ज्ञानत होता है कि भिन्न भिन्न कालमें पद्मनन्दि नाम और उपाधिधारी अनेक मुनि आचार्य हुए हैं। किन्तु लेख नं.४० (६४) में हमारे प्रस्तुत पद्मनन्दिसे अभिप्राय रखनेवाला उल्लेख ज्ञात होता है, क्योंकि, उसमें पद्मनन्दि सैध्दान्तिकके शिष्य कुलभूषण और उनके शिष्य कुलचन्द्र का भी उल्लेख पाया जाता है।

वह उल्लेख इस प्रकार है

अविध्दकर्णादिकपद्मनन्दी सैध्दान्तिकाख्योऽजनि यस्य लोके ।

कौमारदेवव्रतिताप्रसिध्दिर्जीयात्तु सो ज्ञाननिधिः सधीरः ॥

तच्छिष्यः कुलभूषणाख्ययतिपश्चारित्रवारांनिधि-

स्सिध्दान्ताम्बुधिपारगो नतविनेयस्तत्सधर्मो महान् ।

शब्दाम्भोरुहभास्करः प्रथिततर्कग्रंथकारः प्रभा-

चन्द्राख्यो मुनिराजपंडितवरः श्रीकुण्डकुन्दान्वयः ॥

तस्य श्रीकुलभूषणाख्यसुमुनेशिष्यो विनेयस्तुत-

स्सद्वृत्तः कुलचन्द्रदेवमुनिपरिसिध्दान्तविद्यानिधिः ।

यहां पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रके बीच गुरु शिष्य-परम्पराका स्पष्ट उल्लेख है। पद्मनन्दिको सैध्दान्तिक ज्ञाननिधि और सधीर कहा है। कुलभूषणको चारित्रवारांनिधिः और सिध्दान्ताम्बुधिपारग, तथा कुलचन्द्रको विनेय, सद्वृत्त और सिध्दान्तविद्यानिधि कहा है। इस परम्परा और इन विशेषणोंसे उनके धवला-प्रतिके अन्तर्गत प्रशस्तिमें उल्लिखित मुनियोंसे

अभिन्न होनेमें कोई सन्देह नहीं रहता। शिलालेखद्वारा पद्मनन्दिक गुणोंमें इतना और विशेष जाना जाता है कि वे अविध्दकर्ण थे अर्थात् कर्णच्छेदन संस्कार होनेसे पूर्व ही बहुत बालपनमें वे दीक्षित हो गये थे और इसलिए कौमारदेवव्रती भी कहलाते थे। तथा यह भी जाना जाता है कि उनके एक और शिष्य प्रभाचन्द्र थे, जो शब्दाम्भेरुहभास्कर और प्रथित तर्कग्रन्थकार थे।

इसी शिलालेखसे इन मुनियोंके संघ व गण तथा आगे पीछेकी कुछ और गुरु-परम्पराका भी ज्ञान हो जाता है। लेखमें गौतमादि, भद्रबाहु और उनके शिष्य चन्द्रगुप्तके पश्चात् उसी अन्वयमें हुए पद्मनन्दि, कुन्दकुन्द, उमास्वास्ति, गृध्रपिच्छ, उनके शिष्य बलाकपिच्छ, उसी आचार्य परम्परामें समन्तभद्र, फिर देवनन्दि जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद और फिर अकलंकके उल्लेखके पश्चात् कहा गया है कि उक्त मुनीन्द्र सन्ततिके उत्पन्न करनेवाले मूलसंघमें फिर नन्दिगण और उसमें देशीगण नामका प्रभेद हो गया। इस गणमें गोलाचार्य नामके प्रसिद्ध मुनि हुए। ये गोल्लदेशके अधिपति थे। किन्तु, किसी कारणवश संसारसे भयभीत होकर उन्होंने दीक्षा धारण कर ली थी। उनके शिष्य श्रीमत् त्रैकाल्ययोगी हुए और उनके शिष्य हुए उपर्युक्त अविध्दकर्ण पद्मनन्दी सैध्दान्तिक कौमारदेव, जो इसप्रकार मूलसंघ नन्दिगणान्तर्गत देशीगणके सिद्ध होते हैं।

लेखमें पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रसे आगेकी परम्पराका वर्णन इसप्रकार दिया गया है---

कुलचन्द्रदेवके शिष्य माघनन्दि मुनि हुए, जिन्होंने कोल्लापुर (कोल्हापुर) में तीर्थ स्थापित किया। वे भी राध्वान्तार्णवपारगामी और चारित्रचक्रेश्वर थे, तथा उनके श्रावक शिष्य थे सामन्त केदार नाकरस, सामन्त निम्बदेव और सामन्त कामदेव। माघनन्दिके शिष्य हुए- गंडविमुक्तदेव, जिनके एक छात्र सेनापति भरत थे और दूसरे शिष्य भानुकीर्ति और देवकीर्ति। गंडविमुक्तदेवके सधर्म भूतकीर्ति त्रैविद्यमुनि थे, जिन्होंने विद्वानोंको भी चमत्कृत करनेवाले अनुलोम-प्रतिलोम काव्य राघव-पांडवीयकी रचना करके निर्मल कीर्ति प्राप्त की थी और देवेन्द्र जैसे विपक्ष वादियोंको परास्त किया था। श्रुतकीर्तिकी प्रशंसाके ये दोनों पद्य कानडी काव्य

परम्परामायणमे भी पाये जाते हैं। विपक्ष सैद्धान्तिकसे संभव है उन्हीं देवेन्द्रसे तात्पर्य हो, जिनके विषयमें श्वेताम्बर ग्रन्थ प्रभावकचरितमें कहा गया है कि उन्होंने वि. सं. ११८१ में दि. आचार्य कुमुदचन्द्रको वादमें परास्त किया था। इन्हींके अग्रज (सधर्म) थे कनकनन्दि और देवचन्द्र। कनकनन्दिने बौद्ध, चार्वाक और मीमांसकों को परास्त किया था और देवचन्द्र भट्टारकोंके अग्रणी तथा वेताल झोट्टिंग आदि भूत पिशाचोंको वशीभूत करनेवाले बड़े मंत्रवादी थे। उनके अन्य सधर्म थे माघनन्दि त्रैविद्यदेव, देवकीर्ति पंडितदेवके शिष्य शुभचंद्र त्रैविद्यदेव, गंडविमुक्त वादिचतुर्मुख रामचन्द्र त्रैविद्यदेव और वादिवज्राकुंश अकलंक त्रैविद्यदेव। गंडविमुक्तदेवके अन्य श्रावक शिष्य थे माणिक्य भंडारी मरियाने दंडनायक, महापधान सर्वाधिकारी ज्येष्ठ दंडनायक भरतिमय्य हेगडे बूचिमय्यंगलु और जगदेकदानी हेगडे कोरय्य।

इन उल्लेखोंसे हमें पद्मनन्दि कुलभूषणके संघ व गणके अतिरिक्त उनकी पूर्वापर सुविख्यात, विचक्षण और प्रभावशाली गुरुपरम्पराका अच्छा ज्ञान हो जाता है। तथा, जो और भी विशेष बात ज्ञात होती है, वह यह कि, हमारे पद्मनन्दिके एक और शिष्य तथा कुलभूषण सिध्दान्तमुनिके सधर्म जो प्रभाचन्द्र 'शब्दाम्भोरुहभास्कर' और प्रथित-तर्कग्रन्थकार' पदोंसे विभूषित किये गये हैं; वे संभवतः अन्य नहीं, हमारे सुप्रसिद्ध तर्कग्रन्थ प्रमेयकमलमार्तण्ड और न्यायकुमुदचन्द्रके कर्ता प्रभाचन्द्राचार्य ही हों।

यह गुरु परम्परा इस प्रकार पाई जाती है --

गौतमादि

(उनके सन्तानमें)

भद्रबाहु

चन्द्रगुप्त

(उनके अन्वयमें)

पद्मनन्दि कुन्दकुन्द

(उनके अन्वयमें)

सप्तरुपणाकेअन्तकी प्रशस्ति

उमास्वाति गृध्रपिच्छ

बलाकपिच्छ

(उनकी परम्परामें)

समन्तभद्र

(उनकेपश्चात्)

देवनन्दि, जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद

(उनकेपश्चात्)

अकलंक

(उनकेपश्चात् मूलसंघ, नन्दिगणकेदेशीगणमें)

गोल्लाचार्य

त्रैकाल्य योगी

पद्मनन्दि कौमारदेव

कुलभूषण

प्रभाचन्द्र

कुलचन्द्र

माघनन्दिमुनि (कोल्लापुरीय)

गंडविमुक्तदेव, श्रुतकीर्ति

कनकनन्दि

देवचन्द्र, माघनन्दि

त्रैविद्यदेव, देवकीर्ति. पं. दे. के शिष्य

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि उक्त पद्मनन्दि आदि आचार्य किस कालमें उत्पन्न हुए; जिस उपर्युक्त शिलालेखमें उनका उल्लेख आया है, उसमें भी समयका उल्लेख कुछ नहीं पाया जाता। किन्तु वहाँ उस लेखका यह प्रयोजन अवश्य बतलाया गया है कि महामंडलाचार्य देवकीर्ति पंडितदेवने कोल्लापुरकी रुपनारायण वसदिके अधीन केळ्लंगेरेय प्रतापपुरका पुनरुद्धार कराया था, तथा, जिननाथपुरमें एक दानशाला स्थापित की थी। उन्हीं अपने गुरुकी परोक्ष विनयके लिए महाप्रधान सर्वाधिकारी हिरिय भंडारी अभिनव-गंग-दंडनायक श्री हुल्लराजने उनकी निषद्या निर्माण कराई। तथा गुरुके अन्य शिष्य लक्खनन्दि, माधव और त्रिभुवनदेवने महादान और पूजाभिषेक करके प्रतिष्ठा की। हुल्लराज अपरनाम हुल्लप वाजिवंशके यक्षराज और लोकाम्बिकाके पुत्र तथा यदुवंशी राजा नारसिंहके मंत्री कहे गये हैं।

इन यादव और होयसलवंशीय राजा नारसिंह तथा उनके मंत्री हुल्लराज या हुल्लपका उल्लेखन्य अनेक शिलालेखोंमें भी पाया जाता है, जिनसे उनकी जैनधर्म श्रद्धाका अच्छा परिचय मिलता है (देखो जैन शिलालेख संग्रह, भू. पृ. ९४ आदि)। पर उक्त विषयपर प्रकाश डालनेवाला शिलालेख नं. ३९ है जिसमें देवकीर्तिकी प्रशस्तिके अतिरिक्त उनके स्वर्गवासका समय शक १०८५ सुभानु संवत्सर आषाढ शुक्ल ९ बुधवार सूर्योदयकाल बतलाया गया है और कहा गया है कि उनके शिष्य लक्खनन्दि, माधवचन्द और त्रिभुवनमल्लने गरुभक्तिसे उनकी निषद्याकी प्रतिष्ठा कराई।

देवकीर्ति पद्मनन्दिसे पांच पीढी, कुलभूषणसे चार और कुलचन्द्रसे तीन पीढी पश्चात् हुए हैं। अतः इन आचार्योंको उक्त समयसे १००-१२५ वर्ष अर्थात् शक ९५० के लगभग हुए मानना अनुचित न होगा। न्यायकुमुदचन्द्रकी प्रस्तावनाके विद्वान् लेखकने अत्यन्त परिश्रमपूर्वक उस ग्रन्थके कर्ता प्रभाचन्द्रके समयकी सीमा ईसवी सन ९५० और १०२३ अर्थात् शक ८७२ और ९४५ के बीच निर्धारित की है और जैसा ऊपर कहा जा चुका है, वे प्रभाचन्द्र वे ही प्रतीत होते हैं जो लेख नं ४० में पद्मनन्दिके शिष्य और कुलभूषणके सधर्म कहे गये हैं। इससे भी उपयुक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है। कुलचन्द्रमुनिके उत्तराधिकारी माघनन्दि कोल्लापुरीय कहे गये हैं।

उनके एक गृहस्थ शिष्य निम्बदेव सामन्त^१ (जैन शिलालेखसंग्रह, लेख नं. ४०)का उल्लेख मिलता है जो शिलाहार नरेश गंडरादित्यदेवके एक सामन्त थे^२ (Sukrabara Basti Inscription of Kolhapur, in Graham's Statistical Report on Kolhapur. न्यायकुमुदचन्द्र, भूमिका पृ. ११४ आदि.)। शिलाहार गंडरादित्यदेवके उल्लेख शक सं १०३० से १०५८ तक के लेखोंमें पाये जाते हैं। इससे भी पूर्वोक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है।

पद्मनन्दि आदि आचार्योंकी प्रशस्तिके सम्बन्धमें अब केवल एक ही प्रश्न रह जाता है और वह यह कि उसका धवलाकी प्रतिमें दिये जानेका अभिप्राय क्या है? इसमें तो संदेह नहीं कि वे पद्य मूडबिद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिमें है और उन्हींपरसे प्रचलित प्रतिलिपियोंमें आये हैं। पर वे धवलाके मूल अंश या धवलाकारके लिखे हुए तो हो ही नहीं सकते। अतः यही अनुमान होता है कि वे उस ताडपत्रवाली प्रतिके लिखे जानेके समय या उससे भी पूर्वकी जिस प्रति परसे वह लिखी गई होगी उसके लिखनेके समय प्रक्षिप्त किये गये होंगे। संभवतः कुलभूषण या कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनिकी देखरेखमें ही वह प्रतिलिपि की गई होगी। यदि विद्यमान ताडपत्रकी प्रति लिखनेके समय ही वे पद्य डाले गये हो, तो कहना पड़ेगा कि वह प्रति शककी दशवी शताब्दिके मध्य भागके लगभग लिखी गई है। इन्हीं प्रतियोंमेंसे कहीं एक और कहीं दोके प्रशस्त्यात्मक पद्य धवलाकी प्रतिमें और भी बीच बीचमें पाये जाते हैं जिनका परिचय व संग्रह आगे यथावसर देनेका प्रयत्न किया जाएगा।

धवलाके अन्तकी प्रशस्ति

मुडबिद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिके प्रसंगमें हमारी दृष्टि स्वभावतः धवलाकी प्राप्त प्रतियोंके अन्तमें पायी जानेवाली प्रशस्ति पर जाती है। धवलाके अन्तमें धवलाकार वीरसेनाचार्यसे सम्बन्ध रखनेवाली वे नौ गाथाएं पाई जाती हैं। जिनको हम प्रथम भागमें प्रकाशित कर चुके हैं। उन गाथाओके प्रश्चात् निम्न लम्बी प्रशस्ति पाई जाती है, जिसके कानडी अंश पूर्वोक्त प्रो. कुंदनगार व प्रो. उपाध्याय द्वारा बड़े परिश्रमसे संशोधित किये गये हैं।

शब्दब्रह्मेति शाब्दैर्गणधरमुनिरित्येव राध्वान्तविद्भिः,
 साक्षात्सर्वज्ञ एवेत्यभिहितमतिभिः सूक्ष्मवस्तुप्रणीतः ।
 यो दृष्टो विश्वविद्यानिधिरिति जगति प्राप्तभट्टारकाख्यः ।
 स श्रीमान् वीरसेनो जयति परमतध्वान्तभित्तन्त्रकारः ॥१॥

श्रीचारित्रसमृद्धिमिक्कविजयश्रीकर्मविच्छित्तिपूर्वकं ज्ञानावरणीयमूलनिर्नाशनं भूचक्रेश
 बेसकेय्ये संदर्भमुनिवृन्दाधीश्वरकृन्दकुन्दाचार्यधृतधैर्य (गर्यतेयिने (?) नाचार्यरोळवर्यरु
 जितमदविनिर्गतमलर्चतुरंगुलचारणद्धि- निरतर्गणधर (रैरेकैर्त्तिगे (?)) गुणगणधरर्
 यतिपतिगणधररेनिसिद कुंदकुन्दाचार्यर् । अवरन्वयदोळ सिध्वान्तविद-व्याकरणवेदिगळ
 षट्रतर्कव्रवणद्धिसिधिसंजुत्तपरिस्तुतरप्प
 गृधृपिच्छाचार्यधैर्यपरर्नेगर्दगाभीर्यगुणोदधिगळुचितशमदमय-मतात्पर्यरेने गृधृपिच्छार्यर
 शिष्यर्बलाकपिच्छाचार्यगुणनन्दिपंडितनिजगुणनन्दिपंडितजनंगळं मेच्चिसि मैगुणद पेसरेसेये
 विव्दग्गतिलकर्सकलमुनीन्द्रशिष्यर्पदार्थदोळ्यशास्त्रदोळु जिनागमदोळु तंत्रदोळु महाचरितपुराण-
 संततिगळोळ परमाग-मदोळ परर्समं दोरे सरि पाटिपासटि समानमेनल् कृतविद्याररेनुत्तिरे
 बुधकोटिसंदर्भवीतळदोळु । गुणनन्दिपण्डित-शिष्यर्विहितविदर्गे सूनुराशिष्यरोळ
 तपश्चरणसिध्वान्तपारायणरेणिकेगोळ्ककर्पदिवर्तपोविच्छिन्नानंगरेंबी महिमेयिनेसदेर्वा-
 धियेतंतुदारस्वच्छदिनकरकिरणमें बेळगे देवेन्द्रसिध्वान्तरु ॥ अन्तुनेगर्तेवेत्तवर शिष्यकदम्बकदोळ
 समस्तसिध्वान्त-महापयोनिधियेनिसि तडंबरेगं तपोबलाक्रन्तमनोजरागि मदवर्जितरागि
 पोगर्तेवेत्तराशांतं नेगर्द कीर्ति वसुनन्दिमुनीन्द्र-रुदात्तवृत्तियिनुदधिगे कलाधरं पुट्टिदनेन्तवर्गे
 शष्यरादर् गुणदोळेदडे रविचन्द्रसिध्वान्तदेवरेंबर् जगव्दिशेषकचरितर् । अंतु दयावनीधरकृतोदय-
 नादशशांकनिंदे शार्वरि१ गित्तु धरातलमं मत्ते दुर्णयध्वान्तविद्यातमागिरे तदुद्भवर्ि सले पूर्णचन्द्र-
 सिध्वान्तमुनीन्द्र निगदितान्तप्रतिशासनम् जैनशासनम् ॥

इन्दु शरदद बेळ् दिंगळ् पुदिदुदु देसेदेसेयोळेनिप जसदोळ्पं ताळ्द दामनन्दिसिध्दान्त-
देवरवरग्रशिष्य-रधिगततत्वर् ।

शान्ततेवेत्तचित्त जनोळाद विरोधमिदेत्त? निस्पृहर् ।
स्वांततेवेत्तकांक्षे परमार्थदोळितु नेग ल्ते वेत्तिदा ॥
नीतन (रिन्मरा) (?) रेने (जन्य ?) जिनेन्द्रवीरनन्दिसि-
ध्दान्तमुनीन्द्ररें सुचरितक्रमदोळू विपरीत वृत्तरो ॥
बोधितभव्यरचित-वर्धमान श्रीधरदेवरेंबर वर्गग्रतनूभवरादरा ... ।
श्रीधरर्गादशिष्यरवरोळ्नेगळ्दर् मलधारिदेवरुं श्रीधरदेवरुं ॥
नतनरेन्द्रकिरीटतदार्चितक्रमर् अनुवशनागि बर्पनेनगंबुरुहोदरनोंदे पूविनं ।
बिनोळे बसक्केबंदने भवं जलजासननेत्रमीनके ॥
तन मनकं. २ करीन्द्रमदोध्दत नप्प चित्तज - ।
न्मनेनल (दोरलन्मने ?) नेमिचन्द्रर्मलधारिदेव (रंतेरेयेन?)

श्रुतधर (वलित्तिने?) मेय्यनोर्मेयुं तुरिसुयुदिल्ल निद्वेवरेमर्गुलनिक्कुबुदिल्ल वागिलं
किरुतेरे युवुदिल्ल गुर्वदिल्ल (महेन्द्रनु) नेरे (ओण?) बण्णिसल् गुणगणावलियं मलधारिदेवरं ॥
आमलधारिदेवमुनिमुख्यर शिष्यरोळ्ग्रगण्यरुर्विमहित (क्वंपायगुर्व) जितकषायक्रोध३
लोभमानमायामदवर्जित-नेर्गर्दरिन्दुमरीचिगळंदर (दिं?) यशः श्री नेमिचन्द्रकीर्तिमुनिनाथरुदात्त-
चरित्रवृत्तिथिं ॥ मलधारिदेवरिंदं । बेळ्गिदुदु जिनेन्द्रशासनं मुन्नं निर्मलमागि मत्तमीगळ् ।
बेळ्गिदपुदु चन्द्रकीर्तिभट्टारकरिं ॥

बेळ्गुव कीर्तिचंद्रिके मृदूक्तिसुधारसंपूर्णमूर्तयो
ळुबेळेदमलं पोदर्द सितलांछनमागिरे चन्द्रनंदमं ॥
तळेदु जनं मनंगोळे दिगंतरविकसितो-
ज्वलशुभचन्द्रकीर्तिमुनिनाथरिदेवं विबुधाभिवंद्यरो ॥

(पयितुं?) प्रसरकिरणारातीयचन्द्रकीर्तिमुनीद्राशांतवर्तितकीर्तिगळ् मुनिवृन्दवंदित-रादरा
शांतचित्तर शिष्यरादर्विदिवामकरणंदिसिध्दान्तदेवरिदें जिनागमवार्धिपारगरादरो । इदावुदरिदे
दिळिकेय्दु सिध्दान्तवारिधिय तळदेवंदरेंदोडानेन्तुलिसुवेनेनळ् दिवाकरणंदिसिध्दांतदेवराखिलागम-
भक्तरमार्गमंतिमसुधांबुप्रचुरपूरनिकरं व्याख्यानघोषं मरुच्चलितोत्तुंगतरंगघोषमेने मिक्कौदार्यदिं
दोषनिर्मलधर्मांमृतदिनलंकरिसि गंभीरत्वमं ताळि भूवलयक्के पवित्ररागि नेगळ्दरा सिध्दान्त
रत्नाकरर् ॥ अवरग्रशिष्यर्

मरेदुमदोम्भे लोकिकदवार्तेयनाडद केत्तबागिलं ।
तेरेयद भानुवस्तमितभागिरेपोगद मेय्यनोम्भेयुं ॥
तुरिसदकुक्कुटासनकेसोलद गंडविमुक्तवृत्तियं ।
मरेयदघोरदुश्चरतपश्चरितं मळधारिदेवर ॥ अवरग्रशिष्यर्

१

श्रीदः श्रीगणवार्धिर्वर्धनकरश्चन्द्रावदातोल्वणः स्थेयान् श्रीमलधारिदेवयमिनः पुत्रः पवित्रो
भुवि ।

सध्दमेकशिखामणिर्जिनपतेर्भव्यैकचिन्तामणिः स श्रीमान् शुभचन्द्रदेवमुनिपः
सिध्दान्तविद्यानिधिः ॥

२

शब्दाधिष्ठितभूतले परिलसत्साक्कोल्लसस्तंभके(?)
साहित्यस्यधिकाश्मभित्तिरुचिते (?) ज्योतिर्मये मंडले ।
सद्रत्नत्रयमूलरत्नकलशे स्थाव्दादहर्म्य मुदा,
यो (?) देवेन्द्रसुरार्चितैर्दिविषदैस्सदिर्भर्विरेजुस्तु (?) तत् २

३

देवेन्द्रसिध्दान्तमुनीन्द्रपादपंकेजभृंगः शुभचन्द्रदेवः
यदीयनामापि विनेयचेतोजातं तमो हर्तुमलं समर्थः ॥३॥

४

परमजिनेश्वरविरचितवरसिद्धान्ताम्बुराशिपारगरेदी ।
धरे बणिणसुगुं गुणगणधरं शुभचन्द्रदेवसिद्धान्तिकरं ॥४॥

५

श्रीमज्जिनेन्द्रपदपद्मपरागतुङ्गः श्रीजैनशासनसमुद्गतवार्धिचन्द्रः ।
सिद्धान्तशास्त्रविहिताङ्कितदिव्यवाणी धर्मप्रभोधनमुकुरः शुभचन्द्रसूरिः ॥५॥

६

चित्तोद्भूतमदेभकन्ददलनप्रोत्कण्ठकण्ठीरवो भव्याम्भोजकुलप्रबोधनकृते विव्दज्जनानन्दकृत् ।
स्थेयात्कुन्दहिमेन्दुनिर्मलयशोवल्लीसमालम्बनः स्तम्भः श्रीशुभचन्द्रदेवमुनिपः
सिद्धान्तरत्नाकरः ॥६॥

७

कुवलयकुलबन्धुध्वस्तमीहातमिस्त्रे विकसितमुनितत्त्वे सज्जनानन्दवृत्ते ।
विदितविमलनानासत्कलान्विधमूर्तिः शुभमतिशुभचन्द्रो राजवद्राजतेऽयम् ॥७॥

८

दिग्दन्तिदन्तान्तरवर्तिकीर्तिः रत्नत्रयालंकृतचारुमूर्तिः ।
जीयाच्चिरं श्रीशुभचन्द्रदेवी भव्याब्जिनीराराजितराजहंसः ॥८॥

९

श्रीमान् भूपालमौलिस्फुरितमणिगणज्योतिरुद्योतिताङ्घ्रिः
भव्याम्भोजातजातप्रमदकरनिधिस्त्यक्तमायामयादिः ।
दृश्यत्कन्दर्पदर्पद्रवलितगिलितस्तूर्णितश्चार्यशस्यः

जीयाज्जैनाब्जभास्वाननुपमविनयो नोत्तसिध्दान्तदेवः (?) ॥९॥

१०

जीयादसावनुपमं शुभचन्द्रदेवो भावोभदवोभदवविनाशनमूलमंत्रः ।
निस्तन्द्रसान्द्रविबुधस्तुतिभूरिपात्रं त्रैलोक्यगेहमणिदीपसमानकीर्तिः ॥१०॥

११

मुर्तिश्शमस्य नियमस्य विनूतपात्रं क्षेत्रं श्रुतस्य यशसोऽनघजन्मभूमिः ।
भूविश्रुतश्रितवतासुरभोजकल्पानल्पायुधानिवसताच्छुभचन्द्रदेवः ॥११॥

स्वस्ति श्रीसमस्तगुणगणालंकृतसत्यशौचाचारचारुचरित्रनयविनयशीलसंपन्नेयुं विबुध
प्रसन्नेयुं आहाराभयभैषज्य-शास्त्रदानविनोदेयुं गुणगणाल्हादेयुं
जिनस्तवनसमयसमुच्छलितदिव्यगन्धबन्धुरगन्धोदकपवित्रगात्रेयुं गोत्रपवित्रयुं सम्यक्त्वचुडामणियुं
मण्डलिनादश्रीभुजबलंगंगपेर्माडिदेवरत्तेयरुमप्य रविदेवि (?) यक्कं श्रुतपंचमियं नोंतुज्जवणेया-
नाडवन्नियक्त्रेयुत्तुंगचैत्यालयदाचार्यरुं भुवनविख्यातरुमेनिसिदतम्म गुरुगळु
श्रीशुभचन्द्रसिध्दान्तदेवर्गे श्रुतपूजेयं माडिबरे-यिसि कोट्ट धवलेयं पुस्तकंमंगलमहा ॥

श्रीकुपणं (कोपणं) प्रसिध्दपुरमापुरदोळ्गे वंशवार्धि शोभाकरमूर्जितं
निखिलसाक्षरिकास्यविलाससदर्पणं । नाकजनाथवंद्यजिनपादपयोरुहभृङ्गनेन्दु भूलोकमेदं
वर्णिपुदु जिन्नमनं मनुनीतिमार्गनं ।

जिनपदपद्माराधकमनुपमविनयांबुराशिदानविनोदं मनुनीतिमार्गनसतीजनदूरं
लौकिकार्थदानिगजिन्नम् । वारिनिधि-योळ्गेमुत्तम् नेरिदुवं कोंडु कोरेदु वरुणं मुददिं
भारतियकोरळ्ळेळिकदहारमननुकरिसलेसेवरेवों जिन्नम् ॥

यह प्रशस्ति बहुत अशुद्ध और संभवतः स्खलन-प्रचुर है। इसमें गद्य और पद्य तथा संस्कृत और कानडी दोनों पाये जाते हैं। विना मूडबिद्रीकी प्रतिके मिलान किये सर्वथा शुद्ध पाठ तैयार करना असंभवसा प्रतीत होता है। लिपिकारोंने कही कहीं कानडीको विना समझे संस्कृतरूप देनेका भी प्रयत्न किया जान पडता है जिससे बडी गडबडी उत्पन्न हो गई है। उदाहरणार्थ- कर्ता एक वचनका रूप कुन्दकुन्दाचार्यर् तृतीयामें परिवर्तित कुन्दकुन्दाचार्यैर् पाया जाता है। ऐसे स्थलोंको विद्वान संशोधकोंने खूब संभाला है। पर कई स्खलनोंकी पूर्ति फिर भी नहीं की जा सकी, कानडी पद्य भी बहुत भ्रष्ट और गद्यके रूपमें परिवर्तित हो गये है जिनका अर्थ भी समझना कठिन हो गया है। तथापि उससे निम्न बातें स्पष्टतः समझमें आती है ---

१ धवलाकी प्रति वन्नियकेरे चैत्यालयके सुप्रसिद्ध आचार्य शुभचन्द्र सिध्दान्तदेवको समर्पित की गई थी ।

२. शुभचन्द्रदेव देशीगणके थे और उनकी गुरुपरंपरामें उनसे पूर्वकुन्दकुन्द, गृध्रपिच्छ, बलाकपिच्छ, गुणनन्दि, देवेन्द्र, वसुनन्दि, रविचन्द्र, दामनन्दि, वीरनन्दि, श्रीधरदेव, मलधारिदेव, (नेमि) चन्द्रकीर्ति और दिवाकरनन्दि आचार्य हुए।

३. पुस्तक-समर्पण कार्य मंडलिनाडुके भुजबलगंगपेर्माडिदेवकी काकी देमियक्कने श्रुतपंचमी व्रतके उद्यापनके समय किया था।

शुभचन्द्रदेवकी उक्त गुरुपरंपरा परसे उनका पता लगाना सुलभ हो गया। उक्त परंपरा, एक दो नामोंके कुछ भेदके साथ प्रायः वही है, जो श्रवणबेलगुलके शिलालेख नं. ४३ (११७) में पाई जाती है। यही नहीं, किन्तु धवलाकी प्रशस्तिके तीन पद्य ज्यों के त्यों उक्त शिलालेखमें भी पाये जाते हैं (पद्य नं १२, १३ और २१)। लेखमें शुभचन्द्रदेवके स्वर्गवासका समय निम्न प्रकार दिया गया है ---

वाणाम्भोधिभशशांकतुलिते जाते शकाब्दे ततो

वर्षे शोभकृताह्वये व्युपनते मासे पुनः श्रावणे ।

पक्षे कृष्णविपक्षवर्तिनि सिते वारे दशम्यां तिथौ
स्वर्यातः शुभचन्द्रदेवदेवगणभृत सिध्दांतवारांनिधिः ।।

अर्थात् शुभचन्द्रदेवका स्वर्गवास शक संवत् १०४५ श्रावण शुक्ल १० दिन सितवार (शुक्रवार) को हुआ। उनकी निषद्या पोस्सल-नरेश विष्णुवर्धनके मंत्री गंगराजने निर्माण कराई थी।

शिमोगासे मिले हुए एक दूसरे शिलालेखमें बन्नियके चैत्यालयके निर्माणका समय शक सं. १०३५ दिया हुआ है और उसमें मन्दिरके लिये भुजबलगंगपेर्माडिदेवद्वारा दिये गये दानका भी उल्लेख है। अन्तमें देशीगणके शुभचन्द्रदेवकी प्रशंसा भी की गई है। (एपीग्राफिआ कर्नाटिका, जिल्द ८, लेख नं. ९७)

खोज करनेसे धवला प्रतिका दान करनेवाली श्राविका देमियक्कका पता भी श्रवणबेलगुलके शिलालेखोंसे चल जाता है। लेख नं. ४६ में शुभचन्द्र मुनिकी जयकारके पश्चात् नागले माताकी सन्तति दंडनायकित्ति लक्कले, देमति और बुचिराजका उल्लेख है और बुचिराजकी प्रशंसाके पश्चात् कहा गया है कि वे शक १०३७ वैशाख सुदि १० आदित्यवारको सर्व परिग्रह त्याग पूर्वके स्वर्गवासी हुए और उन्हींकी स्मृतिमें सेनापति गंगने पाषाण स्तम्भ आरोपित कराया। लेखके अन्तमें 'मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिध्दान्तदेवके शिष्य बूचणकी निषद्या' ऐसा कहा गया है। इस लेखमें जो बूचणकी ज्येष्ठ भगिनी देमतिका उल्लेख आया है, उसका सविस्तर वर्णन लेख नं. ४९ (१२९) में पाया जाता है। जो उनके संन्यासमरणकी प्रशस्ति है। यहां उनके नाम-देमति, देवमती, देमवती तथा दोबार देमियक्क दिये गये हैं और उन्हें मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिध्दान्तदेवकी शिष्या तथा श्रेष्ठिराज चामुण्डकी पत्नी कहा है। उनकी धर्मबुद्धिकी प्रशंसा तो लेखमें खूब ही की गई है। उन्हें शासन देवताका आकार कहा है, तथा उनके आहार, अभय, औषध और शास्त्रदानकी स्तुति की गई है। उस लेखके कुछ पद्य इस प्रकार हैं---

१

आहारं त्रिजगज्जनाय विभयं भीताय दिव्यौषधं,
व्याधिव्यापदुपेतदीनमुखिने श्रोत्रे च शास्त्रागमम् ।
एवं देवमतिस्सदैव ददती प्रप्रक्षये स्वायुषा ---
मर्हद्देवमति विधाय विधिना दिव्या वधूः प्रोदभुत ॥४॥

२

आसीत्परक्षोभकरप्रतापाशेषावनीपालकृतादरस्य ।
चामुण्डनाम्नो वाणिजः प्रिया स्त्री मुख्या सती या भुवि देमतीति ॥५॥

३

भूलोकचैत्यालयचैत्यपूजाव्यापारकृत्यादरतोऽवतीर्णा ।
स्वर्गात्सुरस्त्रीति विलोक्यमाना पुण्येन लावण्यगुणेन यात्र ॥६॥

४

आहारशास्त्राभयभेषजानां दायिन्यलं वर्णं चतुष्टयाय ।
पश्चात्समाधिक्रियया मृदन्ते स्वस्थानवत्स्वः प्रविवेश योच्चैः ॥७॥

५

सध्दर्मशत्रुं कलिकालराजं जित्वा व्यवस्थापितधर्मवृत्या ।
तस्या जयस्तम्भनिभं शिलायाः स्तंभं व्यवस्थापयति स्म लक्ष्मीः ॥८॥

लेखके अन्तर्में संन्यासविधिसे देहत्यागका उल्लेख इसप्रकार है ---

श्री मुलसंघद देशिगगणद पुस्तकगच्छद शुभचन्द्र सिध्दान्तदेवर् गुड्डि सक वर्ष १०४२ नेय
विकारि संवत्सरद फाल्गुन ब. ११ बृहवार दन्दु संन्यासन विधियि देमियक्क मुडिपिदलु ।

अर्थात् मूलसंघ, देशीगण, पुस्तकगच्छके शुभचन्द्रदेवकी शिष्या देमियक्कने शक १०४२ विकारि संवत्सर फाल्गुन ब. ११ बृहस्पतिवारको संन्यासविधिसे शरीरत्याग किया।

उक्त परिचय परसे संभव तो यही जान पडता है कि धवलाकी प्रतिका दान करनेवाली धर्मिष्ठा साध्वी देमियक्क ये ही होंगी, जिन्होंने शक १०४२ में समाधिमरण किया। तथा उनके भतीजे भुजबलि१ गंगपेर्माडिदेव जिनका धवलाकी प्रशस्तिमें उल्लेख है उनके भ्राता बूचिराजके ही सुपुत्र हो तो आश्चर्य नहीं। उस व्रतोद्यापनके समय बूचिराजका स्वर्गवास हो चुका होगा, इससे उनके पुत्रका उल्लेख किया गया है। यदि यह अनुमान ठीक हो तो धवलाकी प्रति जो संभवतः मूडब्रिदीकी वर्तमान ताडपत्रीय प्रति ही है और जो शक ९५० के लगभग लिखाई गई थी, बूचिराजके स्वर्गवासके पश्चात् और देमियक्कके स्वर्गवासके पूर्व अर्थात् शक १०३७ और १०४२ के बीच शुभचन्द्रदेवके सुपुर्द की गई, ऐसा निष्कर्ष निकलता है। पर यह भी संभव है कि श्रीमती देमियक्कने पुरानी प्रतिकी नवीन लिपि कराकर शुभचंद्रको प्रदान की और उसमें पूर्व प्रतीके बीच-बीचके पद्य भी लेखकने कापी कर लिये हो।

प्रशस्तिके अन्तिम भागमें तीन कानडीके पद्य हैं जिनमेंसे प्रथम पद्य 'श्री कुपणं' आदि में कोपण नामके प्रसिद्ध पुरकी कीर्ति और शेष दो पद्योंमें जिन्न नामके किसी श्रावकके यशका वर्णन किया गया है। कोपण प्राचीन कालमें जैनियोंका एक बडा तीर्थस्थान रहा है। चामुंडराय पुराणके 'असिधारा व्रतदिदे' आदि एक पद्यसे अवगत होता है कि तत्कालिन जैनी कोपणमें सल्लेखना पूर्वक देहत्याग करना विशेष पुण्यप्रद मानते थे। श्रवणबैल्योलके अनेक लेखोंमें इस पुण्य भूमिका उल्लेख पाया जाता है। लेख नं. ४७ (१२७) शक संवत् १०३७ का है। इसके एक पद्यमें कहा गया है कि सेनापति गंगने असंख्य जीर्ण जैनमन्दिरोंका उध्दार कराकर तथा उत्तम पात्रोंको उदार दान देकर गंगवाडिदेशको 'कोपण' तीर्थ बना दिया। यथा ---

मत्तिन मातवन्तिरलि जीर्ण जिनाश्रयकोय्थिं क्रमं

बेत्तिरे मुन्निनन्तिर नितूर्गलोलं नेरे माडिसुत्तम --
त्युत्तमपात्रदानदोदवं मेरेवुत्तिरे गड्गवाडितोम्बत्तरु
सासिरं कोपणमादुदु गड्गणदण्डनाथनि ॥३९॥

इससे कोपण तीर्थकी भारी महिमाका परिचय मिलता है।

लगभग शक सं. १०८७ के लेख. नं. १३७ (३४५) में हुल्ल सेनापतिद्वारा कोपण महातीर्थमें जैनमुनिसंघके निश्चिन्त अक्षय दानके लिए बहुत सुवर्ण व्ययसे खरीदकर एक क्षेत्रकी वृत्ति लगाई जानेका उल्लेख है। यथा ---

प्रियदिन्दं हुल्लसेनापति कोपणमहातीर्थदाळधात्रियुंवा-
द्वियुमुल्लन्नं चतुर्विंशति-जैन-मुनि संघक्केनिश्चिन्तमाग
क्षय दानं सलव पाडिग बहु-कनक-मना-क्षेत्र-जिर्गत्तु सद्वृ--
त्तियनिन्तीलोक मेल्लम्पोगळे विडिसिदं पुण्यपुंजैकधामं ॥२७॥

इससे ज्ञात होता है कि यहाँ मुनि आचार्योंका अच्छा जुटाव रहा करता था और संभवतः कोई जैन शिक्षालय भी रहा होगा।

लगभग १०५७ के लेख नं. १४४ (३८४) के एक पद्यम सेनापति एच द्वारा कोपण और अन्य तीर्थस्थानोंमें जिनमन्दिर बनवाये जानेका उल्लेख है। यथा---

माडिसिदं जिनेन्द्रभवनङ्गःलना कोपणादि तीर्थदळु
रुढियिनेल्दो-वेत्तेसेव बेल्गोलदळु बहुचित्रभित्तियं ।
नोडिदरं मनङ्गोळि पुवेम्बिनमेच-चमूपनर्थि कै-
गुडे धारित्रिकोण्डु कोनेदाडे जसम्मलिदाडे लीलेयिं ॥१३॥

निजाम हैद्राबाद स्टेटके रायचूर जिलेमें एक कोप्पल नामका ग्राम है, यही प्राचीन कोपण सिध्द होता है। वर्तमानमें वहाँ एक दुर्ग तथा चार दीवारी है जो चालुक्य कालीन कलाके द्योतक समझे जाते हैं। इनके निर्माणमें प्राचीन जैन मंदिरोंके चित्रित पाषाण आदिका उपयोग दिखाई दे रहा है। एक जगह दीवारमें कोई बीस शिलालेखोंके टुकडे चुने हुए पाये जाते है। इस स्थानपर और उसके आसपास कोई दस-बीस कोसकी इर्दगिर्दमें अशोकके कालसे लगाकर इस तरफके अनेक लेख और अन्य प्राचीन स्मारक पाये जाते हैं।

कोपणके समीप ही पाल्कीगुण्डु नामक पहाडीपर, अशोकके शिलालेखके पास वरांगचरितके कर्ता जटासिंहनन्दिके चरणचिन्ह भी, पुरानी कन्नडमें लेखसहित, अंकित है। (वरांगचरित, भूमिका पृ. १७ आदि)

इसप्रकार यह स्थान बडा प्राचीन, इतिहास प्रसिध्द और जैनधर्म के लिए बहुत महत्वपूर्ण रहा है१ (देखो जैनसि. भा ५,२ पृ. ११०) ।